इकाई 3 राष्ट्रवादी विमर्श*

इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य

3.1 प्रस्तावना

3.2 राष्ट्र और राष्ट्रवाद की अवधारणा

3.3 भारतीय राष्ट्र और राष्ट्रवादः कुछ प्रमुख विमर्श

3.3.1 ए.आर. देसाई के राष्ट्रवाद पर विचार

3.3.2 राष्ट्रवाद पर पार्थ चटर्जी के विचार

3.3.3 एम. चौधरी के राष्ट्रवाद पर विचार

3.4 स्वतंत्र भारत और उसके बाद की चुनौतियाँ

3.5 सारांश

3.6 संदर्भ

3.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

3.0 उद्देश्य

इस इकाई के माध्यम से पढ़ने के बाद, आप कर सकेंगेः

- राष्ट्र और राष्ट्रवाद की अवधारणा पर चर्चा;
- औपनिवेशिक और उत्तर-औपनिवेशिक भारत दोनों में राष्ट्रवादी विमर्श की व्याख्या;
- भारतीय राष्ट्रवाद पर प्रमुख भारतीय विद्वानों के विचारों की चर्चा; तथा
- उत्तर–उपनिवेशवाद के राष्ट्रीयता विमर्श का विश्लेषण।

3.1 प्रस्तावना

पिछली इकाई में, हमने औपनिवेशिक विमर्श पर चर्चा की, जिसमें हमने यह समझाने की कोशिश की कि ब्रिटिश भारतीय समाज को किस दृष्टि से देखते थे । आपने प्रशासनिक दृष्टिकोण और मिशनरी दृष्टिकोणों के बारे में जाना।

यह इकाई भारतीय समाज को समझने के लिए राष्ट्रवादी वृत्तान्त पर चर्चा करेगी। शुरू करने के लिए, हम राष्ट्र और राष्ट्रवाद की अवधारणा और इसकी परिभाषा के बारे में चर्चा करेंगे। इसके अलावा, हम राष्ट्रवादी परिप्रेक्ष्य के माध्यम से भारतीय समाज को समझने के लिए विभिन्न दृष्टिकोणों पर चर्चा करेंगे। हम औपनिवेशिक काल के दौरान भारतीय राष्ट्र और भारतीय राष्ट्रवाद पर हुई विभिन्न चर्चाओं की व्याख्या करेंगे। अंत में, हम चर्चा करेंगे राष्ट्रवाद और भारत की स्वतंत्रता के बाद की स्थिति पर, और विशेष रूप से पृजाति, जाति, क्षेत्र आदि की तर्ज पर राष्ट्रवादी आंदोलन पर चर्चा करेंगे।

* डॉ. प्रफुल कुमार

3.2 राष्ट्र और राष्ट्रवाद की अवधारणा

एक राष्ट्र की अवधारणा 19वीं शताब्दी की उपज थी, जो पश्चिमी देशों से भारत में सामने आई और बाद में यूरोप के अन्य उपनिवेशों यानी एशिया, अफ्रीका आदि में फैल गई। एक राष्ट्र को ऐसे लोगों के समूहों के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जो सामान्य क्षेत्र, इतिहास, भाषा, मनोवैज्ञानिक दृष्टि आदि साझा करते हैं, एक राष्ट्र का सबसे महत्वपूर्ण तत्व है कि यह हमेशा संप्रभु/स्वतंत्र/स्वायत्त होते हैं। इसलिए, राष्ट्र की शास्त्रीय समझ में, एक राष्ट्र को तभी मान्यता दी जाती है जब वह स्वतंत्र होता है। उसी समय, संप्रभु क्षेत्र में सदस्य एक समान इतिहास, भाषा, संस्कृति आदि साझा करते हैं। यह इतिहासकारों का विचार है कि आधुनिक अर्थों में राष्ट्रवाद औद्योगिक पूंजीवाद या प्रिंट पूंजीवाद के विकास के साथ उभरा और तब इसका निरंतर अस्तित्व कई कारकों की वजह से था। इन कारकों कीवजह थी , विविधता - भाषा, जातीयता या धर्म के आधार पर या राज्यों और कल्पना समुदायों के बीच प्रतिद्वंद्विता और प्रतियोगिता के आधार पर समुदाय की धारणाएं। जैसे 19वीं सदी में या 20वीं सदी के 1950 के दशक तक राष्ट्र और राज्य (Nation of State) कई बार पर्यायवाची थे। तात्पर्य यह है कि एक संप्रभु राज्य बनाने के लिए एक राष्ट्र होना चाहिए या इसके विपरीत केवल एक राष्ट्र का गठन तभी किया जा सकता है यदि यह एक संप्रभु राज्य है। ऐसी शास्त्रीय परिभाषा है कि एक राष्ट्र को ही शासन करना चाहिए।

राष्ट्र की सबसे स्वीकृत शास्त्रीय परिभाषा स्टालिन ने दी थी, जिन्होंने राष्ट्र को एक "ऐतिहासिक रूप से विकसित, भाषा, क्षेत्र, आर्थिक जीवन और संस्कृति के समुदाय में प्रकट मनोवैज्ञानिक दृष्टि" के रूप में परिभाषित किया था (स्टालिन 1991: 6)।

राष्ट्र की परिभाषा आसान नहीं है। यह कठिन और विवादास्पद दोनों है। राष्ट्र को परिभाषित करने के किसी भी प्रयास के साथ मुख्य समस्या यह है कि एक समय में, हमें बड़ी संख्या में ऐसे राष्ट्र मिल जाएंगे जो उस परिभाषा के अनुरूप नहीं हैं। इस प्रकार यह प्रतीत होता है कि राष्ट्रों की वास्तविक दुनिया इतनी विविधतापूर्ण है (उनकी समानता के बावजूद) कि कोई भी एक परिभाषा सभी को शामिल करने की उम्मीद नहीं कर सकती है। यह आंशिक रूप से इस कारण से है कि विद्वानों ने आम तौर पर सभी स्थितियों के लिए लागू राष्ट्र की एक सार्वभौमिक परिभाषा प्रदान करने से परहेज किया है। उन्होंने विशिष्ट राष्ट्रों का वर्णन करना आसान पाया है। विशिष्ट अनुभवों के आधार पर कुछ व्यापक सिद्धांतों को अमूर्त करना अधिक कठिन हो गया है। अर्नेस्ट गेलनर, (उद्धृत) इस विषय पर एक और महत्वपूर्ण सिद्धांतकार हैं, जिन्होंने दो विशेषताओं की पहचान की जो संभवतः सामान्य परिभाषा का हिस्सा बन सकती हैं:

क) संस्कृति और

ख) संकल्प

लेकिन वह खुद जानता था कि वे अपर्याप्त हैं और वास्तव में दोनों विशेषताएँ सभी प्रकार के राष्ट्रों की सही पहचान नहीं कर पातीं। वे उन्हे फिर से उद्धृत करते हैं:

"फिर क्या यह आकस्मिक है, लेकिन हमारे समय में राष्ट्र के विचार सार्वभौमिक और प्रामाणिक हैं? दो बहुत ही कामचलाऊ चर्चा, अस्थायी परिभाषाओं की चर्चा इस कठिन अवधारणा को इंगित करने में मदद करेगी।

1) दो व्यक्ति एक ही राष्ट्र के हैं यदि और केवल तभी जब वे एक ही संस्कृति को साझा करते हैं, जहां संस्कृति का अर्थ विचारों और संकेतों और संघों और व्यवहार और संचार के तरीके से हो।

2) दो व्यक्ति एक ही राष्ट्र के हैं किन्तु और केवल तभी जब वे एक दूसरे को एक ही राष्ट्र का वासी मानते हैं और पहचानते हैं।

दूसरे शब्दों में, राष्ट्र मनुष्य को बनाते हैं। राष्ट्र पुरुषों के विश्वास,निष्ठा और एकजुटता के गुण हैं। व्यक्तियों की एक मात्र श्रेणी (कहते हैं, किसी दिए गए क्षेत्र के रहने वाले, या किसी भाषा के बोलने वाले, उदाहरण के लिए) एक ऐसा राष्ट्र बन जाता है, यदि और जब श्रेणी के सदस्य अपने साझा किए गए पुण्य के फलस्वरूप एक-दूसरे को कुछ पारस्परिक अधिकारों और कर्तव्यों को दृढ़ता से पहचानते हैं इसकी सदस्यता इनमें से प्रत्येक की अन्तरिम परिभाषा, सांस्कृतिक और स्वैच्छिक है, जिसमे कुछ योग्यता है। उनमें से प्रत्येक एक तत्व को बाहर निकालता है जो राष्ट्रवाद की समझ में वास्तविक महत्व रखता है। लेकिन इसमे से कोई तथ्य पर्याप्त नहीं है। संस्कृति की परिभाषा,पहली परिभाषा की पूर्वमान्यता के अनुसार, मानक अर्थ के बजाय मानवशास्त्रीय परिभाषा में, असंतोषजनक हैं। औपचारिक परिभाषा के मार्ग में बहुत अधिक प्रयास किए बिना इस शब्द का उपयोग करके (राष्ट्र) इस समस्या का संभावित उत्तम अर्थ सबसे अच्छा है। "(1983, पृष्ठ 7)।

राष्ट्रवाद का आधुनिक विचार 19वीं शताब्दी के आरंभ में पश्चिमी यूरोप से आया, जिसमें तीन किस्में थीं, जिन्होंने इसकी रचना की:

1) राजनीतिक आत्मनिर्णय के उदार संकल्पना के रूप में ज्ञानोदय, (रूसो, जेम्स मिल्स और अन्य)
2) समान नागरिकों के समुदाय का फ्रांसीसी क्रांतिकारी विचार, और
3) इतिहास, परंपरा और संस्कृति द्वारा गठित लोगों की जर्मन अवधारणा।

अंतिम प्रक्रिया-उत्पाद के रूप में, राष्ट्रवाद इस प्रकार स्वतंत्रता, समानता और इतिहास और संस्कृति के सामूहिक बंटवारे के सिद्धांतों से बंधा हुआ था। '(डायस्पोरा और ट्रांसनैशनल समुदाय, MSOE- 002 पुस्तक 2 पृ 148)।

दूसरी ओर राष्ट्रवाद राष्ट्र के प्रति व्यक्ति की निष्ठा और अपनेपन का भाव है। अपनेपन, या निष्ठा का ऐसा भाव उसके जन्म, उसकी भाषा, संस्कृति आदि के कारण आता है।

अर्नेस्ट गेलनर ने अपनी पुस्तक के शुरुआती अनुच्छेद में इन शब्दों को परिभाषित किया है:

"राष्ट्रवाद मुख्य रूप से एक राजनीतिक सिद्धांत है, जो मानता है कि राजनीतिक इकाई और राष्ट्रीय इकाई के अनुरूप होनी चाहिए। एक भावना के रूप में, या एक आंदोलन के रूप में राष्ट्रवाद, इस सिद्धांत के संदर्भ में सर्वोत्तम रूप से परिभाषित किया जा सकता है। राष्ट्रवादी भावना, सिद्धांत के उल्लंघन से पैदा हुए क्रोध की भावना है, या इसकी पूर्ति से उत्पन्न संतुष्टि की भावना है। एक राष्ट्रवादी आंदोलन इस तरह की भावना से प्रेरित होता है "(अर्नेस्ट गेलनर 1983: 1)।

बॉक्स 3.0

राष्ट्रवादी विचारधारा के मुख्य विषय :

1) मानवता स्वाभाविक रूप से राष्ट्रों में विभाजित है।
2) प्रत्येक राष्ट्र का अपना विशिष्ट चरित्र है।
3) समस्त राजनीतिक शक्ति का स्रोत राष्ट्र, और संपूर्ण सामूहिकता है।

4) स्वतंत्रता और आत्म प्राप्ति के लिए, मनुष्यों को एक राष्ट्र के साथ पहचान करनी चाहिए।

5) राष्ट्र केवल अपने राज्यों में ही पूर्ण हो सकते हैं।

6) राष्ट्र के प्रति वफादारी अन्य सभी वफादारियों से सर्वोपरि है।

7) वैश्विक स्वतंत्रता और सामंजस्य की प्रमुख शर्त राष्ट्र-राज्य की मजबूती है। (संदर्भ) एडम स्मिथ

बोध प्रश्न 1

नोट : क) अपने उत्तरों के लिए नीचे दी गई जगह का उपयोग करें।

ख) इकाई के अंत में दिए गए उत्तर के साथ अपने उत्तरों की जांच करें।

1) राष्ट्र की अवधारणा क्या है?

.....

.....

.....

.....

.....

2) राष्ट्रवाद के आधुनिक विचार के माध्यम से तीन गुण क्या हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

3.3 भारतीय राष्ट्र और राष्ट्रवाद : कुछ प्रमुख विमर्श

औपनिवेशिक सत्ता के भारत में आने से पहले, क्षेत्र भारत को विभिन्न छोटे-बड़े रियासतों और राजवंशों में विभाजित किया गया था। धर्म, संस्कृति, भाषा और क्षेत्र के संदर्भ में इसकी विविधता के कारण यह व्यापक रूप से माना जाता था कि भारत एक राष्ट्र नहीं बन सकता है क्योंकि इसमें एक सामान्य संस्कृति, भाषा या एक सामान्य इतिहास नहीं था, बल्कि इसमें बहुत अधिक विविधताएं थीं। भारत के राष्ट्रवाद 'में मदद करने वाले कारकः

1) अंग्रेजों ने उन विभिन्न खंडों को एक विलक्षण प्रशासनिक दायरे में लाये और साथ ही नौकरशाही, पश्चिमी शिक्षा, कानून, अदालत, संचार के साधन, प्रिंटिंग प्रेस आदि जैसे विभिन्न आधुनिक संस्थानों की शुरुआत की। (उन्होंने भारतीय समाज में बदलाव लाए, लेकिन इसके विपरीत इसने भारतीय लोगों के साथ-साथ अन्य प्राकृतिक संसाधनों के दोहन के लिए औपनिवेशिक शक्ति की भी मदद की)।

2) तत्कालीन औपनिवेशिक-विरोधी आंदोलन के उदय ने भारत को एक राष्ट्र के रूप में स्थापित करने में कोई कसर नहीं छोड़ी। 1885 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के गठन

के बाद, इसने आंदोलन को तेज किया और विभिन्न क्षेत्रों के लोगों को एकता के एक सूत्र में लाने के लिए प्रेरित किया।

3) उन्होंने उन विविधताओं को बांधने के लिए कुछ प्रतीकों का निर्माण किया जैसे कि आम भाषा (हिंदी), सामान्य ध्वज, राष्ट्रीय गीत/गान, आदि। इस प्रकार विविधता के बावजूद विविध वर्गों के बीच एक आम भावना पैदा की गई। इन्हें व्यापक रूप से विविधता में एकता के रूप में जाना जाता है। हालाँकि, बाद में गांधी, नेहरू, पटेल और अन्य स्वतंत्रता सेनानियों ने आंदोलन को तेज करने के लिए भारत के राष्ट्रवादी आंदोलन जैसे अहिंसा, असहयोग, सविनय अवज्ञा आंदोलन आदि में नए व्याख्यान जोड़े।

4) यूरोपीय राष्ट्रवाद के यूरोपीय मॉडल के विपरीत भारतीय राष्ट्रवाद के संदर्भ में, उपनिवेश विरोधी आंदोलन ने भी बड़ी भूमिका निभाई। कई विद्वानों का तर्क है कि भारत का स्वतंत्रता संग्राम राष्ट्रीय से अधिक उपनिवेशवाद विरोधी था। यह संघर्ष अंग्रेजों के खिलाफ समाज के सभी वर्गों को एक मंच पर ला सका।

पिछले 200 -250 वर्षों के दौरान, भारतीय राष्ट्रवाद में कई बदलाव हुए हैं। औपनिवेशिक काल में, राष्ट्रवाद मूल रूप से उपनिवेशवाद-विरोधी था और स्वतंत्रता संग्राम के नेता सभी वर्गों को एक छत्र के नीचे ला सकते थे, हालांकि विभिन्न चरणों में प्रतियोगिताएं होती थीं। इस तरह की प्रतियोगिताएं दक्षिणपंथी हिंदू और मुस्लिम दोनों नेताओं से हुईं। जैसे, औपनिवेशिक काल में संस्कृति की रेखा में एक प्रकार का धार्मिक राष्ट्रवाद उभर कर सामने आया। इसके अलावा, दलितों और निचली जातियों के समूहों से भी विशेषकर अंबेडकर के नेतृत्व में संघर्ष हुआ । विशेष रूप से दलितों और छोटे राष्ट्रीयताओं के अनसुने मुद्दों को बाद में भारतीय राज्य के रूप में शामिल किया गया था, जिसका विरोध प्रतिरोध के रूप में किया गया था और इसका विरोध बड़े पैमाने पर जातीय आंदोलनों के रूप में किया जाता था। भारत में इस समय काफी संप्रदायिक मतभेदों का सामना करना पड़ा था।

औपनिवेशिक काल के बाद के भारत में विभिन्न उप-नागरिकों, क्षेत्रीय और जनजातीय आंदोलनों ने एक राष्ट्र के रूप में भारत के विचार या एक राष्ट्र के रूप में भारत को चुनौती दी। कई बार विभिन्न समूहों का राष्ट्रवादी विमर्श हमें क्षेत्रीय असमानता, विविधता आदि को समझने की गुंजाइश देता है। इसलिए, राष्ट्रीयता विमर्श औपनिवेशिक और उत्तर औपनिवेशिक काल में भारतीय समाज को समझने के लिए एक महत्वपूर्ण सिद्धांत है।

भारतीय राष्ट्र और राष्ट्रवाद के विभिन्न शास्त्रीय विचारों के अलावा, भारत में राष्ट्रवादी विमर्श को समझने के लिए कई अन्य चर्चाएं और व्याख्याएं हैं। उनमें ए. आर. देसाई, डी. डी. कोसांबी, पार्थ चटर्जी आदि ने भारतीय राष्ट्रवाद को समझने के लिए नए आयाम प्रस्तुत किए हैं। देसाई ने भारतीय राष्ट्रवाद की मार्क्सवादी दृष्टिकोण से व्याख्या की जहां उन्होंने भारतीय राष्ट्रवाद की सामाजिक पृष्ठभूमि पर ध्यान दिया। भारतीय राष्ट्रवाद पर पार्थ चटर्जी की थीसिस बेनेडिक्ट एंडरसन के राष्ट्र और राष्ट्रवाद के विचार की आलोचना है और उन्होंने चर्चा की कि भारतीय राष्ट्रवाद का गठन राष्ट्र के पश्चिमी गठन से अलग था। यहां हम स्वतंत्र भारत में विभिन्न जातीय समूहों की राष्ट्रीयता आंदोलन को समझने के लिए पॉल ब्रास पर और औपनिवेशिक काल में राष्ट्रवाद को समझने के लिए ए. आर. देसाई और पार्थ चटर्जी पर चर्चा करेंगे।

बोध प्रश्न 2

नोट : क) अपने उत्तरों के लिए नीचे दी गई जगह का उपयोग करें।

ख) इकाई के अंत में दिए गए उत्तर के साथ अपने उत्तरों की जांच करें।

1) राष्ट्रीयता के निर्माण में भारत को किन चुनौतियों का सामना करना पड़ा ?

.....

.....

.....

.....

.....

3.3.1 ए.आर. देसाई और भारतीय राष्ट्रवाद

ए. आर. देसाई भारत के प्रमुख समाजशास्त्रियों में से एक थे। वह भारतीय समाज को समझने में विचार के मार्क्सवादी विचारधारा का प्रतिनिधित्व करते हैं और भौतिक परिस्थितियों का विश्लेषण करके भारतीय राष्ट्रवाद की सामाजिक पृष्ठभूमि का विश्लेषण करते हैं। उनकी पुस्तक "सोशल बैकग्राउंड ऑफ़ इंडियन नेशनलिज्म" (1946) औपनिवेशिक भारत की सामाजिक स्थितियों को समझने के लिए पथ-प्रदर्षक कार्यों में से एक थी। भारतीय राष्ट्रवाद में हालिया रुझान (1960) देसाई का एक और महत्वपूर्ण कार्य है।

देसाई ने मार्क्सवादी दृष्टिकोण से भारतीय राष्ट्रवाद की सामाजिक पृष्ठभूमि को समझने के लिए औपनिवेशिक, और बाद के औपनिवेशिक काल को देखा। भारत में पूर्व-औपनिवेशिक काल के दौरान सामंती वर्ग किसान वर्ग पर हावी था। यह सामंती वर्ग, जिनमें से कई मुस्लिम शासकों के अधीन थे, ने किसानों का शोषण किया।

भारतीय राष्ट्रवाद की सामाजिक पृष्ठभूमि में देसाई (1946) ने औपनिवेशिक काल के दौरान भारतीय समाज में संरचनात्मक परिवर्तनों की व्यापक समझ का विश्लेषण किया है। उन्होंने सामंतवाद, उसके परिवर्तनों और पूंजीवादी ताकतों के उदय के दौरान उत्पादन संबंधों की जांच की और आखिरकार इस तरह की सामाजिक परिस्थितियों में राष्ट्रवाद कैसे उभरा। देसाई ने विश्लेषण किया कि भारत में राष्ट्रवाद क्यों और कैसे उभरा और सामाजिक और भौतिक परिस्थितियाँ क्या थीं। देसाई ने विभिन्न कारकों को समझने की कोशिश की जिसके कारण दुनिया के विभिन्न कोनों में राष्ट्र निर्माण हुआ। उसके लिए विभिन्न देशों में राष्ट्रवाद के विकास के बाद और संबंधित देश के विभिन्न सामाजिक और सांस्कृतिक इतिहास के साथ-साथ "राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक संरचनाएं, और सामाजिक वर्गों के मनोवैज्ञानिक और आर्थिक लक्षणों के विशिष्ट चरित्र निर्धारित किए गए थे जो उन देशों में एक राष्ट्रीय सामाजिक अस्तित्व के लिए संघर्ष का मोहरा थे । प्रत्येक राष्ट्र इस प्रकार एक अनोखे तरीके से पैदा हुआ और इसी तरह पनपा था ".

देसाई ने राष्ट्रीय भावना की उत्तेजना को समझा, इसलिए उन्होंने कहा कि आज की दुनिया में ऐसी भावनाएं प्रमुख हैं। सभी प्रकार के समकालीन आंदोलनों जैसे कि आर्थिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक आदि राष्ट्रवाद की ऐसी भावनाओं से प्रेरित थे।

भारतीय राष्ट्रवाद के इतिहास की पड़ताल करते हुए, देसाई उपनिवेशवाद में उसकी जड़ में पाते हैं। उनका मानना है कि भारतीय समाज में विकसित कई व्यक्तिपरक और उद्देश्य

विचारों के कारण उन्होंने कार्यों और अंतर-क्रियाओं से भारतीय राष्ट्रवाद के निर्माण में मदद की। लेकिन, उनका तर्क है कि भारतीय राष्ट्रवाद के विकास की प्रक्रिया अपने आर्थिक और अन्य कारकों के कारण बहुत जटिल थी। भारतीय समाज की सामाजिक संरचना काफी अनोखी थी। मध्यकालीन यूरोपीय समाजों और देशों के विपरीत भारतीय समाज का आर्थिक आधार अलग था। इसके अलावा, भौगोलिक, भाषा, सांस्कृतिक अंतर इस क्षेत्र को अद्वितीय और जटिल बनाते हैं। लेकिन इतने मतभेदों के बावजूद भारत में ब्रिटिश शासन ने भारतीय राष्ट्रवाद के उदय और विकास के लिए वे कारण प्रदान किये। ब्रिटिश शासन और भारतीय राष्ट्रवाद के बीच संबंधों को देखने वाले देसाई का तर्क है "ब्रिटिश शासन के तहत भारतीय लोगों की राजनीतिक अधीनता की वजह से अनेक अपने स्वयं के उद्देश्य के लिए उन्नत किया ब्रिटिश राष्ट्र, भारतीय समाज की आर्थिक संरचना को मौलिक रूप से बदल दिया, एक विकेंद्रित (केंद्रीकृत) राज्य की स्थापना की, और आधुनिक शिक्षा, संचार के आधुनिक साधन और अन्य संस्थानों की शुरुआत की। इससे नए सामाजिक वर्गों का विकास हुआ और अपने आप में अद्वितीय नई सामाजिक शक्तियों का उदय हुआ। अपने स्वभाव से ये सामाजिक ताकतें ब्रिटिश साम्राज्यवाद के साथ संघर्ष में आ गईं और भारतीय राष्ट्रवाद के उदय और विकास के लिए लक्षित (मकसद) शक्ति का आधार बन गईं "।

देसाई ने औपनिवेशिक काल के दौरान भारतीय समाज के मूलभूत आर्थिक परिवर्तन का विश्लेषण किया है। उन्होंने माना कि आर्थिक परिवर्तन क्षेत्र की विविध आबादी को एकजुट करने के लिए आवश्यक सामग्री में से एक था। साथ ही उन्होंने भारतीय लोगों के एकीकरण की दिशा में योगदान देने और उनके बीच एक राष्ट्रवादी चेतना जगाने में आधुनिक परिवहन, नई शिक्षा, प्रेस, और अन्य कारकों की भूमिका को भी संबोधित किया।

देसाई ने भारतीय राष्ट्रवाद के विकास को पाँच चरणों में वर्गीकृत किया:

1) **पहला चरण**

पहले चरण में, भारतीय राष्ट्रवाद का एक संकीर्ण सामाजिक आधार था। 19वीं शताब्दी के पहले दशक के दौरान शैक्षिक संस्थानों की स्थापना अंग्रेजों ने की थी, जो नए शिक्षित भारतीयों का एक समूह पैदा कर सके थे, जिन्होंने पश्चिमी संस्कृति का अध्ययन किया और उन्होंने अपने लोकतांत्रिक और राष्ट्रवादी मूल्यों को आत्मसात किया। उन शिक्षित बुद्धिजीवियों ने भारतीय राष्ट्रवाद की पहली धारा बनाई। राजा राम मोहन राय भारतीय राष्ट्र के विचार के पहले प्रतिपादक थे। उन्होंने इस विचार का अपने लोगों में प्रचार किया। विभिन्न भारतीयों ने धार्मिक सुधार आंदोलनों से समाज में बदलाव किया। शिक्षितों का विचार था कि "भारतीय समाज और धर्म को लोकतंत्र, तर्कवाद और राष्ट्रवाद के नए सिद्धांतों की भावना में बदल देता है। वास्तव में, ये आंदोलन भारतीय लोगों के एक वर्ग के बीच बढ़ती राष्ट्रीय लोकतांत्रिक चेतना की अभिव्यक्ति थे "(वही: 409)। उन्होंने प्रेस की स्वतंत्रता के साथ-साथ प्रशासन में भी भारतीयों का आवाज को शामिल करने की मांग की। 1885 तक पहला चरण भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के गठन के साथ समाप्त हुआ।

2) **दूसरा चरण**

दूसरे चरण में लगभग 1885-1905 की अवधि शामिल थी। कांग्रेस को चलाने वाले उदारवादी बुद्धिजीवी राष्ट्रीय आंदोलन के नेता थे। इस अवधि के दौरान पश्चिमी शिक्षा के विस्तार के साथ-साथ भारत और भारत के बाहर व्यापार के विकास के कारण एक नया व्यापारी वर्ग और शिक्षित अभिजात वर्ग भारत में विकसित हुआ। भारत में स्थापित आधुनिक औद्योगिक विकास के परिणामस्वरूप औद्योगिक वर्ग का विकास

हुआ। इस वर्ग ने ताकत हासिल करना शुरू कर दिया। यह वर्ग कांग्रेस के करीब हो गया जिसने "देश के औद्योगीकरण के कार्यक्रम को अपनाया और 1905 में स्वदेशी अभियान को सक्रिय रूप से संगठित किया"। इस चरण ने सेवाओं के भारतीयकरण के साथ-साथ कई भारतीयों को खुद को प्रशासनिक और राज्य मशीनरी के साथ जोड़ा। इस चरण में भारत में उग्रवाद का उदय भी हुआ।

3) **तीसरा चरण**

तीसरे चरण की पहचान 1905-1918 के बीच देसाई ने की। तीसरे चरण में उदारवादियों की जगह अतिवादियों (एक्स्ट्रेमिस्ट्स) ने ले ली। यह उग्रवाद और निम्न मध्यम वर्ग को शामिल करने का दौर था। यह चरमपंथी राष्ट्रीय स्वाभिमान और आत्मविश्वास की भावना पैदा कर सका था। देसाई कहते हैं कि इस अवधि के दौरान नेताओं ने एक हिंदू दर्शन पर ऐसी चेतना को आधार देने का प्रयास किया। यह धर्मनिरपेक्ष भारत के चरित्र को कमजोर बना सकता था। उसी समय उच्च वर्ग के मुसलमानों ने भी राजनीतिक चेतना विकसित की और मुस्लिम लीग नामक राजनीतिक संगठन की स्थापना की।

4) **चौथा चरण**

चौथा चरण 1918 से शुरू होता है जब तक कि नागरिक आज्ञाकारिता आंदोलन (Civil Disobedience Movement) 1930-34 तक नहीं चलता। यह राष्ट्रवादी आंदोलन के विस्तार की अवधि थी, जो पहले मध्यम वर्ग और निम्न मध्यम वर्ग तक सीमित थी। देसाई कई कारकों को देखते हैं जो भारतीय जनता के बीच राष्ट्रीय जागृति लाते हैं। उनका मानना है, "युद्ध के बाद का आर्थिक संकट, सरकार के वादों के बारे में मोहभंग, और राज्य द्वारा बढ़ते दमन ने किसानों और मजदूर वर्ग सहित लोगों को गंभीर रूप से प्रभावित किया था और वे बहुत बुरी स्थिति में थे" (वही) : 412)।

इसके अलावा, कई देशों के लोकतांत्रिक आंदोलन के साथ-साथ रूस में समाजवादी क्रांति ने भारतीय जनता को प्रोत्साहित किया। उसी समय औद्योगिक विस्तार के कारण युद्ध के दौरान भारतीय पूंजीपति आर्थिक रूप से मजबूत हुए। कांग्रेस के स्वदेशी या बहिष्कार के नारे ने अंततः उन भारतीय पूंजीपतियों की मदद की जिन्होंने इस आंदोलन का आर्थिक सहारा दिया।

5) **पांचवा चरण**

भारतीय राष्ट्रवाद और भारत की स्वतंत्रता के लिए राष्ट्रवादी आंदोलन के पांचवें चरण में 1934-39 की अवधि, द्वितीय विश्व युद्ध के प्रकोप का वर्ष है। यह चरण विभिन्न समूहों द्वारा गांधी की विचारधारा के साथ निराशा को दर्शाता है, विशेष रूप से कांग्रेस के अंदर विभिन्न समूहों का उदय हुआ। अहिंसा और स्वदेशी की गांधीवादी विचारधारा पर कई कांग्रेसियों ने अपना विश्वास खो दिया। सोशलिस्ट पार्टी ने मज़दूरों और किसानों की समस्याओं के आधार पर खड़ा किया। अवसादग्रस्त वर्गों के उदय, असंतुष्टों ने सुभाष चंद्र बोस द्वारा फॉरवर्ड ब्लॉक का गठन किया। हम इस अवधि के दौरान मुस्लिम लीग का उदय भी देखते हैं।

इस प्रकार, देसाई ने भारतीय राष्ट्रीयता के एक मार्क्सवादी विश्लेषण को भारतीय राष्ट्रीय इतिहास के विभिन्न पहलुओं को देखते हुए प्रस्तुत किया।

बोध प्रश्न 3

ध्यान दें:

खाली जगह भरें

अ) भारत में पूर्व-औपनिवेशिक काल के दौरान ..... वर्ग किसानों के वर्ग पर हावी था।

ब) देसाई ने भारतीय राष्ट्रवाद के विकास को ..... चरणों में वर्गीकृत किया।

स) पहला चरण ..... में भारतीय राष्ट्रीय कॉंग्रेस के गठन के साथ समाप्त हुआ।

द) तीसरे चरण में उदारवादियों की जगह ..... द्वारा प्रतिस्थापित किया गया।

3.2.2 राष्ट्रवाद पर पार्थ चटर्जी का विचार

राष्ट्र और राष्ट्रवाद पर बेनेडिक्ट एंडरसन के विचार राष्ट्र और राष्ट्रवाद के विमर्श में सबसे अधिक स्वीकृत सिद्धांतों में से एक हैं। उनकी पुस्तक इमेजिड कम्युनिटीज़ (Imagined Community) (1991) ने राष्ट्र और राष्ट्रवाद को समझने के लिए नए विचारों को प्रदान किया। एंडरसन का तर्क है कि राष्ट्र एक काल्पनिक समुदाय है जिसके बारे में कल्पना की जाती है। उसके लिए, राष्ट्र एक कल्पनाशील समुदाय होने के साथ-साथ एक सांस्कृतिक कलाकृति है "... एक कल्पना की गई राजनीतिक समुदाय - और दोनों के रूप में स्वाभाविक रूप से सीमित और संप्रभु है" (एंडरसन 1991, 6)। इसकी कल्पना इसलिए की गई है क्योंकि "यहां तक कि सबसे छोटे राष्ट्र के सदस्य भी अपने अधिकांश साथी-सदस्यों को कभी नहीं जान पाएंगे, उनसे मिल सकते हैं, या यहां तक कि उनके बारे में भी सुन सकते हैं, फिर भी प्रत्येक के मन में एक साथ सम्प्रेषण की छवि रहती है"। इस प्रकार राष्ट्र एक अमूर्त घटना है जहाँ समुदाय के सदस्य खुद को एक राष्ट्र के रूप में कल्पना करते हैं। यह सीमित भी है क्योंकि "राष्ट्र यहां तक कि उनमें से सबसे बड़ा राष्ट्र भी शायद एक अरब से भी ज्यादा जीवित मनुष्यों को शामिल करता है।

एंडरसन ने पश्चिमी देशों (यूरोप) में राष्ट्र के विचार के विकास की जांच की। वह कहते हैं कि विभिन्न समाजशास्त्रीय स्थितियों ने किसी घटना के गठन में मदद की। ऐसा ही एक कारक प्रिंट मीडिया का पूंजीवाद था - यूरोप में प्रिंटिंग प्रेस का उदय हुआ । प्रिंट मीडिया पूंजीवाद को अपने लाभ को बढ़ाने के लिए एक बड़े बाजार की आवश्यकता के रूप में इस्तेमाल करता है। हालाँकि एक समूह की बोली जाने वाली भाषा एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में भिन्न हो सकती है, लेकिन लिखित भाषा एक-दूसरे के समान और पारस्परिक रूप से बोधगम्य होती है। इसलिए समाचार पत्र, विशेष रूप से किताबें और सामान्य रूप से मीडिया पूंजीवाद एक राष्ट्रीय कल्पना बना सकते हैं। (एक ही समय में मुद्रण प्रौद्योगिकी के ऐसे रूपों ने सभी कोनों की खबरें छापीं, जिनके लिए यह राष्ट्रीय कल्पना आसान हो गया और एक-दूसरे को समझना भी संभव हो गया। एंडरसन का तर्क है कि "इस प्रक्रिया में, वे धीरे-धीरे सैकड़ों सैकड़ों लोगों के बारे में जागरूक थे, यहां तक कि लाखों को, अपनी विशेष भाषा क्षेत्र में, और एक ही समय में उन सैकड़ों, हजारों या लाखों लोगों से संबंधित थे। ये साथी पाठक, जिनके साथ वे अपने धर्मनिरपेक्ष, विशेष रूप से प्रिंट, गठन के माध्यम से जुड़े थे। दृश्यमान, अदृश्य, राष्ट्रीय कल्पना समुदाय के भ्रूण थे "(वही ,44))।

एंडरसन आगे तर्क देते हैं कि यूरोप के उपनिवेशों में, समान आधार पर विभिन्न राष्ट्रों का गठन किया गया था।

दूसरी ओर, पार्थ चटर्जी ने कल्पना समुदाय पर एंडरसन के दृष्टिकोण की आलोचना की। उन्होंने भारतीय राष्ट्रवाद के गठन के बारे में एक अलग समझ प्रस्तुत की। चटर्जी ने एंडरसन के विचार पर सवाल उठाया कि राष्ट्र यूरोप में विकसित एक 'मॉड्यूलर' रूप था और बाद में भारत और अन्य जैसे उपनिवेशों द्वारा अपनाया गया। ऐसी धारणा की समस्या यह है कि पश्चिम ने राष्ट्र के नाम पर कॉलोनियों की कल्पना करने के लिए कोई स्थान नहीं छोड़ा। चटर्जी ने सवाल किया कि अगर "बाकी दुनिया को यूरोप और अमेरिका द्वारा पहले से उपलब्ध कराए गए कुछ 'मॉड्यूलर' रूपों में से अपने कल्पित समुदाय को चुनना है, तो उनके पास कल्पना करने के लिए क्या है?" (चटर्जी 1993, 5)।

इस तरह की धारणाओं से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि एशिया और अफ्रीका में यूरोप की उपनिवेश केवल आधुनिकता के निरंतर उपभोक्ता थे, उनके पास पहले से ही राष्ट्रवाद के पूर्व संस्करण उपलब्ध थे। अधिक स्पष्ट रूप से, राष्ट्र के संबंध में कल्पना भी हमेशा उपनिवेश होती है।

चटर्जी ने इस मुद्दे पर बहस करते हुए कहा कि एंडरसन ने आध्यात्मिकता यानि स्पीरिचुअल की अनदेखी की - आंतरिक डोमेन के अंदर का स्थान, जहां उन्होंने राष्ट्रवाद को समझने के लिए बाहरी मैटीरियल (Material) डोमेन पर बहुत जोर दिया। चटर्जी, इस प्रका भारतीय राष्ट्रवाद का विश्लेषण करने के लिए राष्ट्रवाद के नए आयाम यानी आध्यात्मि क क्षेत्र का प्रस्ताव रखते हैं। उन्होंने आध्यात्मिक डोमेन को देखा, जो घरों में या समाज में भारत में उपनिवेशवाद विरोधी राष्ट्रवाद की मूल विशेष

ता के रूप में संरक्षित था। यह आंतरिक डोमेन समाज के सांस्कृतिक मार्करों (प्रतीकों) ो वहन करता है जो संस्कृति के माध्यम से राष्ट्रीय कल्पना के लिए आवश्यक है। औ निवेशिक बंगाल से भारतीय राष्ट्रवाद का विश्लेषण करने के लिए उदाहरणों को ाते हुए उन्होंने भाषा, संस्कृति, नाटक, स्कूलों, परिवार, महिलाओं आदि का उदाहरण दिय और राष्ट्र निर्माण में उनकी भूमिका का वर्णन किया। भाषा पर चर्चा करने म चटर्जी ने एक राष्ट्रीय भाषा के विकास के लिए प्रिंट मीडिया पूंजीवाद के एंडरसन के विचार को स्वीकार किया। बंगाल में हालांकि ईस्ट इंडिया कंपनी और क्रिश्चियन मिशनरियों ने 18वीं ाताब्दी के दौरान बंगाली भाषा में पहली किताबें प्रकाशित की थीं, लेकिन बंगाल के पढ़े -लिखे कुलीन जो द्वि-भाषी थे, उन्होंने इसे एक परियोजना के रूप में लिया - बाद में बंगाली भाषा में और अधिक पुस्तकें प्रकाशित करने के लिए एक सांस्कृतिक परियोजना तै ार की। चटर्जी कहते हैं, "अपनी मातृभाषा को आवश्यक भाषाई उपकरणों के साथ प्रदान क ने के लिए ताकि वह" आधुनिकसंस्कृति" के लिए उपयुक्त भाषा बन सके। (वही, 7)। समाचार पत्र, पत्रिका प्रकाशित किए गए थे, प्रिंटिंग प्रेस की स्थापना 19वीं शताब्दी में बंगाल में ुई थी। इसके अलावा, भाषा के मानक आकार देने के लिए साहित्यिक निकाय स मने आए। यह सब औपनिवेशिक राज्य के दायरे से बाहर हुआ। एक समूह की भाषा ाष्ट्रीयता के गठन के लिए मूल डोमेन में से एक है। यह एक ऐसे समूह की विशिष्ट ांस्कृतिक पहचान के रूप में भी कार्य करता है जहाँ औपनिवेशिक सत्ता की शायद ही कोई भूमिका थी। 19 वीं शताब्दी के उत्तरार्ध से बंगाली कुलीन लोगों ने स्कूलों की स्थ ापना शुरू कर दी। इसने राज्य बनने से पहले "उपयुक्त शैक्षिक साहित्य" का निर्माण किया। ड ेमेन के बाहर, राज्य के ये स्कूल नई भाषा और साहित्य को सामान्य बनाने और सामान्य करन के स्थल थे। चटर्जी एक अन्य आंतरिक डोमेन यानी परिवार के बारे

भी बात करते हैं। उसके लिए, परिवार ने राष्ट्रीय संस्कृति के संरक्षण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। भारत की यूरोपीय धारणा और इसकी कई परंपराओं, धार्मिक प्रथाओं को बर्बर माना जाता था क्योंकि 19वीं और 20 वीं शताब्दी के दौरान यह काफी प्रभावी थी। विशेष रूप से महिलाओं से संबंधित विभिन्न प्रथाओं की उनके द्वारा आलोचना की गई जैसे कि सती प्रथा। हालाँकि, भारत में नए उभरे कुलीन लोग उन प्रथाओं को सुधारने के लिए यूरोपीय लोगों को बोझ देने के लिए तैयार नहीं थे। एक राष्ट्र के सदस्यों को सुधार करना चाहिए - उन्हें स्वयं एक राष्ट्र की समस्याओं को सुधारने का अधिकार है। राष्ट्र बाहरी लोगों को अपने समाज के सांस्कृतिक क्षेत्र में विशेष रूप से हस्तक्षेप करने की अनुमति नहीं देता है। इस तरह की धारणाएं सांस्कृतिक प्रथाओं को अपनी सांस्कृतिक पहचान बनाए रखने के लिए जीवित रख सकती हैं। चटर्जी ने सांस्कृतिक पहचान को संरक्षित करने में महिलाओं की भूमिका की भी जांच की। महिलाएं सांस्कृतिक परंपराओं की वाहक हैं। हालाँकि, इस तरह की प्रथाओं से एक नई पितृसत्ता का उदय हुआ, लेकिन इसने राष्ट्रीय कल्पना में मदद की। कुलीन लोग चाहते थे कि उनकी महिलाएँ नये युग की महिलाएँ बनें, लेकिन फिर भी पूरी तरह पश्चिम की महिलाओं की तरह नहीं।

इस प्रकार, कल्पना की गई समुदायों पर एंडरसन के तर्क की आलोचना करते हुए चटर्जी ने हमें भारतीय राष्ट्रवाद का एक नया मॉडल पेश किया, जिसमें कहा गया कि भारत में राष्ट्रीयता का आध्यात्मिक आधार था। कुछ ऐसे रूप थे जिनके लिए औपनिवेशिक काल में किसी राष्ट्र की कल्पना संभव थी।

3.3.3 एम.चौधरी के राष्ट्रीयता पर विचार

चौधरी (1999) तीन आयामों के माध्यम से भारत के उपनिवेशवाद विरोधी राष्ट्रवाद में दिखता है, जहाँ उसने महिलाओं की भूमिका पर जोर दिया। वह जिन कारकों को धारण करता है,इस प्रकार है :

1) ''यह अपने आर्थिक पहलुओं में औपनिवेशिकता के एक अच्छी तरह से विकसित आलोचना पर आधारित था और एक आर्थिक विकास के लिए अग्रणी कार्यक्रम पर आधारित था' (चंद्राल 999: 17)। आर्थिक आत्मनिर्भरता, संप्रभुता, इक्विटी के साथ विकास भारतीय राष्ट्रवाद की बहुत पहचान का हिस्सा थे।

2) यह आंदोलन राजनीतिक लोकतंत्र और नागरिक स्वतंत्रता के लिए प्रतिबद्ध था, जिसे राष्ट्र निर्माण के कलंक के रूप में देखा जाता था (चन्द्रः वही)। राष्ट्रीय आंदोलन और फिर स्वतंत्र राज्य की दौड़ में महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी महत्वपूर्ण थी।

3) भारतीय राष्ट्रवाद भी उपनिवेशवाद का एक 'सांस्कृतिक समालोचक और राष्ट्रीय संस्कृति' का दावेदार था। इस दावे में 'भारतीय नारीत्व' की छवि महत्वपूर्ण थी। जैसा कि राष्ट्र और राष्ट्रवाद कुछ प्रकार की संस्कृति और परंपरा की मांग करते हैं, जिसके माध्यम से व्यक्ति या समूह खुद को अपने समूह से जोड़ सकते हैं। जैसा कि चटर्जी भारतीय राष्ट्रवाद के मामले में तर्क देते हैं, कि भारतीय अभिजात वर्ग नहीं चाहता था कि बाहरी लोग आंतरिक क्षेत्र में हस्तक्षेप करें जो कि संस्कृति का हिस्सा था और महिलाएं काफी हद तक इसकी संरक्षक थीं। यदि किसी सुधार की आवश्यकता है तो यह राष्ट्र द्वारा ही किया जाएगा न कि बाहरी लोगों द्वारा।

बोध प्रश्न 4

नोट : क) अपने उत्तरों के लिए नीचे दी गई जगह का उपयोग करें

ख) इकाई के अंत में दिए गए उत्तर के साथ अपने उत्तरों की जांच करें

1) पार्थ चटर्जी के अनुसार भारतीय राष्ट्रवाद अलग कैसे था ?

.....

.....

.....

.....

.....

3.4 स्वतंत्र भारत और उसके बाद की चुनौतियाँ

स्वतंत्र भारत के बाद, एक राष्ट्र राज्य के रूप में भारत के विचार को देश के विभिन्न हिस्सों में विभिन्न उप-राष्ट्रीय, जातीयता आंदोलनों के रूप में गंभीर चुनौतियों का सामना करना पड़ा। आजादी के शुरुआती वर्षों में गंभीर आंदोलन द्रविड़ आंदोलन और नागाओं के बीच आंदोलन थे। वे एक स्वायत्त नागालैंड चाहते थे। स्वतंत्र खालिस्तान और कश्मीर के लिए आंदोलन हुए हैं। स्वतंत्रता के बाद की अवधि में ये विभिन्न प्रकार के पहचान आंदोलन सामने आए, और इन्हें भाषा, क्षेत्र, धर्म, जाति और जनजाति के आधार पर विभाजित किया जा सकता है। भारतीय घटक राज्यों को स्वतंत्रता के बाद भाषाई आधार पर विभाजित किया गया था। हालाँकि, अधिक राज्यों के निर्माण के लिए नई मांगें आने लगीं। इसी तरह, देश के कई हिस्सों में आदिवासी आंदोलन अलग-अलग समय पर अलग-अलग राज्य में अपनी स्वायत्तता के लिए भी हुए। उनमें से, विभिन्न जातीय समूहों के पूर्वोत्तर भारत में आंदोलन और पश्चिम बंगाल के गोरखाओं के आंदोलन ने राष्ट्रीय स्तर पर काफी ध्यान आकर्षित किया।

बोध प्रश्न 5

2) भारतीय राष्ट्र के लिए विभिन्न चुनौतियाँ क्या हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

3.5 सारांश

हमने औपनिवेशिक काल के दौरान भारतीय राष्ट्रवाद के कुछ बिंदुओं के साथ-साथ औपनिवेशिक काल के बाद के जातीयता और राष्ट्रीयता से जुड़े कुछ मुद्दों पर चर्चा की है। भारतीय समाज की गतिशीलता को समझने के लिए राष्ट्रवाद एक महत्वपूर्ण विचारधारा है। वर्तमान समय के संदर्भ में भी विभिन्न उप-राष्ट्रीय, क्षेत्रीय, आदिवासी और जातीय आंदोलनों

का विश्लेषण करने के लिए राष्ट्रीय विमर्श को समझना आवश्यक है। हमने भारत में राष्ट्रवाद पर ए. आर. देसाई, पार्थ चटर्जी और मैत्रेयी चौधरी जैसे विभिन्न विद्वानों द्वारा उपलब्ध कराए गए कुछ प्रमुख विषयों पर व्याख्या की है। हमने बेनेट एंडरसन के इमेजिंड कम्युनिटी 'की अवधारणा और राष्ट्र की अवधारणा पर भी चर्चा की।

3.6 संदर्भ

एंडरसन, बेनेडिक्ट,1991. इमेजिंड कम्युनिटीज़. रिफ़्लेक्शंस ऑन द ओरिजिंस एंड स्प्रेड ऑफ नेशनलिज़्म. लंदनः वरसो

ब्रास, पॉल आर. 1991. एथ्निसिटी अंड नेशनलिज़्मः थियरी अंड कम्पेरिजन. न्यू डेलहीः सेज पब्लिकेशन

चटर्जी,पार्था. 1993. नेशन एंड इट्स फ्रग्मेंट्सः कोलोनियल अंड पोस्ट कोलोनियल हिस्टरिज. न्यू जर्सीः प्रिंसटन यूनिवर्सिटी प्रेस.

चौधरी, मैत्रेयी. 1999. " जेंडर इन द् मेकिंग ऑफ द इंडियन नेशन- स्टेट". सोसिओलोजिकल बुलेटिन. वोल 48. नं). 113-133.

देसाई, ए. आर. 2000. सोसल बैकग्राउंड ऑफ इंडियन नेशनलिज़्म. न्यू डेलहीः पोपुलर प्रकाशन.

गेलनर, अर्नेस्ट. 1983. नेशंस एंड नेशनलिज़्म, इथका अंड लंदनः कोरनेल यूनिवर्सिटी प्रेस.

मुखर्जी, पार्था एन. 1994. " द इंडियन स्टेट इन क्राइसिस? नेशनलिज़्म अंड नेशन बिल्डिंग". सोसिओलोजिकल बुलेटिन,वोल 43,नं 1 (मार्च 1994), पृ. 21 - 49.

ओमवेत, गेल. 1994. "रिकन्स्ट्रक्टिंग द मेथोड़ोलोजी ऑफ एक्सप्लोइटेशन : कास्ट, क्लास अंड जेंडर एज़ कैटेगोरी ऑफ एनालिसिस इन पोस्ट कोलोनियल सोसायटीज़", अण्डरस्टैंडिंग द पोस्ट कोलोनियल वर्ल्डः थियरी अंड मेथड. नीरा चंडोक (एड). न्यू डेलहीः स्टर्लिंग पब्लिकेशन.

स्टेलिन, जोसेफ. 1991. मार्क्सइज़्म एंड नेशनल एंड कोलोनियल क्वेश्चन. न्यू डेलही. कनिष्क पब्लिशिंग हाउस.

डियास्पोरा अंड ट्रांस नेशनल कम्युनिटीज 2010 , MSOE-002, बुक 2 इग्नू, न्यू डेलही.

नेशन एंड नेशनलिज़्म 2018, MHI-09- B1E. पृ. 65.

3.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) स्टालिन ने राष्ट्र को एक "ऐतिहासिक रूप से विकसित, भाषा, क्षेत्र, आर्थिक जीवन और संस्कृति के समुदाय में प्रकट मनोवैज्ञानिक मेकअप" के रूप में परिभाषित किया।

2) 19वीं सदी की शुरुआत में आधुनिक राष्ट्रवाद का आधुनिक विचार पश्चिमी यूरोप के तीन गुणों का मेल थाः

   क) ज्ञानोदय

   ख) समान नागरिकों के समुदाय का फ्रांसीसी क्रांतिकारी विचार, और

   ग) इतिहास, परंपरा और संस्कृति द्वारा गठित लोगों की जर्मन अवधारणा।

बोध प्रश्न 2

1) भारत को राष्ट्र बनाने में चुनौतियों का सामना करना पड़ा क्योंकि भारत विभिन्न रियासतों और राजवंशों में विभाजित था। धर्म, संस्कृति, भाषा और क्षेत्र के संदर्भ में इसकी विविधता के कारण यह व्यापक रूप से माना जाता था और यह धारणा थी कि भारत एक राष्ट्र नहीं बना सकता है क्योंकि इसमें एक सामान्य संस्कृति, भाषा या एक सामान्य इतिहास नहीं था।

बोध प्रश्न 3

1) रिक्त स्थान भरें

   अ) सामंती

   ब) पांच

   स) 1885 में

   द) अतिवादी

बोध प्रश्न 4

1) भारत में राष्ट्रवाद पश्चिमी राष्ट्रवाद से अलग था क्योंकि यह आध्यात्मिकता के आधार पर था।

बोध प्रश्न 5

2) स्वतंत्रता के बाद भारत को जिन विभिन्न प्रकार की चुनौतियों का सामना करना पड़ा, वे थे कि स्वतंत्रता के बाद के समय में विभिन्न प्रकार के पहचान आंदोलन सामने आए और जो भाषा, क्षेत्र, धर्म, जाति और जनजाति की तर्ज पर विभाजित किए जा सकते हैं।